ORIGINAL RESEARCH PAPER Hindi

श्री कमलेश शर्मा 'सहमा हुआ समय'काव्य संग्रह के साहित्यिक आयाम

KEY WORDS:

माया रानी कैरावाली डॉकखनाःमाखोसरानी तहसील एवं जिला सिरसा। 125055

श्री कमलेश शर्मा ने साहित्य को समाज से जोड़ने का आग्रह करते हुए काव्य रचना की है। कवि का मूल उद्देश्य कवि कर्म पर केन्द्रित रहा है। जीवन के राग–विराग, हर्ष–विषाद एवं सुख–दुख के साथ–साथ समाज सापेक्ष भावना को इन्होनें अनिवार्य माना है। जैसे 'भागो' कविता कवि के साहित्यिक आयामों को स्वतः सिद्ध करती है। कवि कमलेश शर्मा जमीन से जुड़े हुए साहित्यकार हैं। अतः समाज के प्रत्येक कोने का उन्होनें झांक कर देखा है। भ्रष्ट समाज को भोगा है।

अचेतन को चेतना प्रदान कर
दिलों की मैल धो देगा
मेरे शहर को
पहले–सी रौनक देगा ?[1]

कवि खिन्न है कि इस सर्वव्यापी भ्रष्टाचार के खिलाफ लोग अपनी सुविधाओं और चैन को छोड़कर आवाज कब उठाएंगे? क्या भीड़ में से कोई संवेदनशील आदमी बाहर नहीं आएगा जो चेतना को लोगों में जगा सके। उन्हें उनकी जकड़नों, अनाम बंधनों और सैंकड़ों सीमाबद्धताओं का बोध करा सके। जब तक दीवारों और झूठी सुविधाओं का तिलस्म सिर पर हावी है तब तक हर तकलीफ और यंत्रणा स्वीकार करनी ही होगी। उससे बचकर निकल कर भी हम बच नहीं पाएंगे। इसलिए वह हारना नहीं चाहता। वह लड़ाई चाहता है। बगावत चाहता है। कहीं वह पारदर्शी स्वच्छता नहीं है। जिसमें से आप आर–पार निकल जाएं। उसे समय जंग खा गया लगता है, वह महसूस करता है कि इस देश में कभी लड़ाई को जारी नहीं रखा जा सकता, यहां लोगों की चेतना के तापमान में कभी उतार–चढ़ाव नहीं होता। वह लोगों को भविष्य के प्रति एक नई जिंदा संचेतना का संदेश देना चाहता है। श्री कमलेश शर्मा ने साहित्य को समाज से जोड़ने का आग्रह किया है–

लगता है
अवचेतन मन में
खूँटी से टंगी
यादों की गठरी
अपने ही बोझ से फटकर बिखर गई है ।[2]

वह चाहता है कि अगली सारी पीढ़ी इस लड़ाई को जारी रखे और अपने खिलाफ और इर्द–गिर्द खड़ी सारी दीवारों को मुक्त करके समस्त संस्कारों और मोहों से दूर रहे। भ्रष्टाचार, शोषण, आतंक, वर्गभेद, अनीति, अंधविश्वास आदि के प्रति कवि ने कलम चलाई।

आम जन पर स्थितियों का दबाव है और उस दबाव से निजात पाने की तीव्र आकांक्षा है। अपनों से लड़ाई में आदमी कभी उत्साहित नहीं महसूस करता। बल्कि वह और चुप और अकेला हो जाता है।

आम जन अपने अंदर जो उबलन, जो उफान, जो आग वह महसूस करता है। उससे वह पाता है कि वह मनुष्य नहीं रह गया है। जहां आदमी स्वयं के अनुसार न होकर किसी अन्य के अनुसार होने पर विवश हो वहीं मनुष्यत्व की पहचान से वह अपने को कटा हुआ पाए–यह आश्चर्यजनक नहीं है।

कवि ने समाज के ठेकेदारों को अनेक कविताओं में चेतावनी दी है। अधिकांश कविताएं आम आदमी से जुड़ी हुई हैं। उसके समझौता न कर पाने की स्थिति, लेकिन सारे अस्तित्व को बेहतर दबावों को एहसास देती टीसती हुई परिस्थितियों को झटके से तोड़ न सकने की विवशता को व्यक्त करती है।

श्री कमलेश शर्मा की सभी कविताएं भारतीय संस्कृति के रंग मे रंग कर परोसी गयी हैं। जगह–2 कवि के अंतरानुभव, उसका यह सुलगता हुआ चिंतन सांस्कृतिक बोध की उस विशेषज्ञता को उभार सके हैं जो खून में मिले रिश्तों और संस्कारों को जकड़े हुए अनाम मोहों को तोड़ कर एकदम मुक्त तो नहीं हो सकता, लेकिन स्वीकार भी नहीं कर पाता। लेकिन यह सब है कि वह बोध प्रतिकूल समस्त स्थितियों के खिलाफ एक धधकती हुई मनःस्थिति को लगातार जीता है। यही स्वतंत्रता बोध की अहमियत है और यही हमें प्रायः सभी कवियों में मिलती है। आलोच्य कविताओं में संस्कारगत और कुछ अपनी ही दुर्बलताओं के सींखचों में मुक्त होने की आतुरता, विकलता, साथ ही साथ अपनी सीमाओं को निर्मम होकर तोड़ न सकने की विवश तकलीफ के प्रति कवि का आक्रोश है। कवि ने पौराणिक पात्रों के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्यों के पतन पर चिंता जताई है– जिस्म का मुआयना करती

ढीठ बेहया नज़रों को झेलती
रह–रहकर आंचल संभावती
चिपचिपी कामुक निगाहों को
बार–बार चेहरे से पोंछती ।
कुछ निगाहों की चुभन
महसूस कर रही है, पीठ पर भी
पर आज साथ कोई सहेली भी तो नहीं
जिससे बातें कर
इस पीड़ा से ध्यान हटा पाए [3]

भारतीय समाज और परिवेश में संस्कृति से अलग कोई अहमियत और कोई अलग व्यक्तित्व स्वीकृत नहीं है। कवि ने पौराणिक पात्रों के माध्यम से खंडित सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति चिंता जताई है।

कवि भारतीय स्त्री को अपने ही भीतरी संस्कारों और भावुक दुर्बलताओं से बहुत तकलीफदेह मानसिक लड़ाई को मूर्त करते हैं और इस लड़ाई के माध्यम से भारतीय नारी के स्वातंत्र्य–बोध की सीमाओं का बोध कराते हैं। यह सीमाएं निःसंदेह अपनी ही बनाई हुई हैं। लेकिन यह भी सच है कि इस सीमा बोध की जड़े भारतीय परिवेश में और भारतीय जीवन व्यवस्था में है जिसमें सांस्कृति मुक्ति की संभावनाएं बहुत कम हैं। संस्कृति से अलग एक व्यक्ति रूप में बहुत कम स्वीकार किया जाता है। कवि ने रहन सहन, रीति–रिवाज, संस्कार, धमादि को संस्कृति के अनुरूप चित्रित किया है। उसे निभाने के विरुद्ध जाते ही व्यवस्था और समाज के तेवर बदल जाते हैं। दूसरे शब्दों में हिप्पोक्रेसी पाखंड और ढोंग आज के आदमी की चेतना के ईमानदार स्तर पर बार–बार हॉट करती है और उससे मुक्ति पाने की बेचैनी और विकलता को कवि के आलम्बन भोगते हैं।

जीवन सुख–दुःख पर क्रेन्दित रहता है। आलोच्य कविताओं में एक और घनीभूत पीड़ा है तो दूसरी और वैराग्य भाव भी। कितना घना मानसिक संत्रास है। कवि की सारी सफरिंग का पूरा चित्र उभारता हुआ उस व्यवस्था के व्यवस्थापकों की अमानवीयता और क्रूर मानसिकता का, भयावह बोध से प्रेम की सहमी हुई शब्दावली में चित्रण करता है..... और एक खौफ के अनुभव में मुक्ति की बेचैनी को ध्वनित करता है।..... सच असल में यह था कि भय और पराजय के उस ठंडे माहौल से वह बचना चाहता था अच्छा होगा उसे भी राग–विराग से जुड़ी कविताएं दुखद सत्य को तेजी से उभारती हुई प्रतीत होती है कि यहां विद्रोह का मतलब है अपनी ही आग में झुलस जाना कई दुश्मनों की तेज तर्रार, गुर्राती आंखों के सामने अपने को जिबह होते महसूस करना और अंततः खामोशी से उसी विसंगति की जमीन पर जीने पर विवश हो जाना था। वह भी आखिर क्रोध और उत्तेजना से जल उठा। लेकिन उन सबकी खूंखार आंखों का एहसास होते ही वह आतंकित हो उठा। कवि उस व्यवस्था पर छिपी हुई चोट करता है, जिसमें आदमी आत्मविश्वास को खोने के लिए विवश है। कवि उदय प्रकाश ने अपनी पीड़ा को अनेक कविताओं मे व्यक्त किया है। राग–विराग का एक उदाहरण देखिये–

जिंदगी का बोझ ढोते–ढाते
स्वयं ज़िन्दगी पर बोझ हो गया ।
अन्ततः धनुशाकार देह की
प्रत्यंचा टूट गई
श्वासों का तूणीर खाली हुआ
और वह यही सोचता–सोचता
चिर निद्रा में सो गया
'काश ! वह
विरासत में मिले अभाव
भावी पीढ़ी को न देता ।'[4]

ह्यूमिलिएशन जलालत की तीखी और उबलती हुई प्रतिक्रिया में वहआखिर अपने को उस व्यवस्था के सामने झुका हुआ पाता है। बल्कि उसे दुख होता है कि वह अब तक क्यों इस व्यवस्था को खूंखारता को समझ नहीं पाया था। कवि ने सांकेतिक शैली में राग–विराग को वाणी दी है।

ठंड से सुन्न हुए हाथों से
जब फिसलकर गिरती हैं
झांड़ियाँ
तब खाते हैं झिड़कियाँ
ध्यानपूर्वक यूँ देखते हैं सुन्न हुई उगंलियाँ ।
जैसे कोई जादूगर
पढ़ रहा हो
कोई सिद्धि मंत्र ।[5]

कवि श्री कमलेश शर्मा समस्त परिवेश से परीचित करानें में दक्ष है, परंतु वैयक्तिक भावों को दरकिनार नहीं कर पाया। इस सपाट मनःस्थिति और संवेदनहीनता की तह में जबर्दस्त संवेदनाकूलता है, हाहाकार है, अस्तित्व–संकट का बेचैन और भयावह–बोध है। वह जानता है–प्रेम भी वह नहीं कर सकता क्योंकि उसके भीतर जो गहरी अवसादमथता है। पालतूपन से उसे नफरत है। जहां संबंध धीरे–धीरे बंधनों का, निभाने का और पालतूपन का बोध देने लगे वही संबंध वास्तव में भरने लगते हैं और इसलिए वह घिसटते हुए संबंधों की अनिवार्य बिरस परिणीत से मुक्त रहना चाहता है। कवि ने भ्रष्टाचार पर कथ्य को 'राज्यसत्ता' कविता के माध्यम से व्यक्त किया है।

भिक्षु !
सत्य है
तुम्हारा कथन–
'यहाँ अपना कुछ नहीं
न कोई सगा–संबंधी
न कोई मित्र–प्यारा
न अपना तन

न अपना तन
न अपना मन ।
यह दुनियां प्रवंचना है
भ्रमों की संरचना है [6]

उसे अपनी बचपन के जुड़ावों की स्मृति है, आज वह जुड़ावों के लिए अब तरसता है तो वह उनका मूल्य पहचान पाया है। अपनी वर्तमान जिंदगी में वह अपने को एक ऐसा पत्थर पाता है जिसकी कोई उपयोगिता नहीं है। वह अपनी सपाट, जड़ मानसिकता से मुक्ति पाना चाहता है और उन जुड़ावों को, उस अपनी जीवनी–शक्ति को लौटा लाना चाहता है ताकि वह इस स्थायी नीरसता और सदाबहार एकरसता से छुटकारा पा सके। वह अपनी इस सपाटता से मुक्ति चाहता है जिसके कारण मृत्यु के प्रति भी कोई भयावह बोध उसमें जन्म नहीं लेता। वह संवेदना चाहता है जो प्रतिक्रिया दे, जो तड़प उठे, वह देखकर भी नहीं देखता, रो नहीं सकता, चीख नहीं सकता। उसका चेहरा एकदम सपाट है–

'भावों के जंगल से गुज़र रहा हूँ
अनिश्चिता के वातावरण से
ठूँठ हुए मानव–वृक्ष
पथराई ऑखों से
निहार रहे होते हैं [1]

अपनी चेतना के स्तर पर ईमानदार रहने की छटपटाहट हारने का संत्रास दे सकती है। सत्ता के शोषण का वह बहुत तीखे व्यंग्य के साथ चित्रण करता है। उनकी कविताओं में भी हमें परतंत्रता के बहुत व्यापक संत्रास का अनुभव होता है और कवि का, बोध जीवन और परिवेश की घनीभूत विसंगतियों, कुरूपताओं, अर्थहीनताओं और टूटते जाने की विवशता के खिलाफ अपने स्वरूप को रूपायित करता है।

अदृश्य अकेलेपन और दृश्य स्थानांतरण जिसमें जीवन की संपूर्णता के भीतर चलने वाली गहरी यथार्थता का व्यंग्य भी शामिल है। इसके संबंध को सर्जनात्मक यात्रा के अंत तक खोजने के लिए सबसे पहले इसी संबंध की खोज है। आंतरिक तिलमिलाहट और असंतुष्टि ही वर्तमान लेखन की उपलब्धि है। कवि का भी गहरा यथार्थ बोध उनका कहानियों में आज के आदमी की सही तकलीफ को पकड़ जाता है। अनुभव के बाद की। अशांति और बेचैनी में से ही वे गुजरते है और कुरूप यथार्थ के समानांतर चलते हुए दर्द और असंतोष की प्रतिक्रियाओं में करवटें लेते हुए स्वतंत्रता बोध के सही स्वरूप को सामने लाते है। यही काफी है कि उनका कवि वर्तमान सारी बेतुकी और निर्मम स्थितियों के प्रति टकराहट और तीव्र उबलन का अनुभव करता है।

निष्कर्ष:–

कहा जा सकता है कि कविताओं के आलंबन सामान्य जीवन से परे, ढर्रे के जीवन की सतह से अलग, दुनिया को लेकर अपने अस्तित्व की उपयोगिता और सार्थकता को लेकर सोचते हैं और इसलिए एक चिन्तात्मक बेचैनी के मन में हमें प्रायः मिलेगी। सोचने की सारी परम्परागत हदों को तोड़कर वे कुछ ज्यादा सोचते हैं मुख्य बात यह है कि यह है कि उनकी अति–चेतनता उन्हें खोखलेपन और बेमानीपन का बोध शीघ्र ही करा देती है। फलतः वे सामान्य लीकों पर चल रहे जीवन के सुख से संतुष्ट नहीं होते, बल्कि उसे तोड़ते हैं और परिणाम स्वरूप प्राप्त समस्त अकेलेपन, अलगाव और टूटन को भोगते हैं। जिन सीधे–सीधे सामाजिक–प्रतिबंध, पारिवारिक बंधन जैसे नाम नहीं दिए जा सकते। सच यह है कि अब तक स्वीकृत सारी उपलब्धियों को ही वे झूठ साबित करते हैं। अनेक संबंध जो आदमी को आदिम जरूरत होते हैं। उन्हें उपलंबध करके जो सुरक्षा, जो जुड़े होने की सांत्वना मिलती है, कवि यहीं तक संतुष्ट नहीं हो जाते, वे अपने व्यक्तिगत सुखों को सुख नहीं मानते। उन्हें तो अपने चारों ओर की विसंगतियां तेजी से हॉट करती है और उन्हें अपनी सुखद मुद्राएं फिजूल और निरर्थक लगने लगती हैं, परिणाम स्वरूप वे विद्रोह करते हैं। बाहर निकल कर उन व्यापक तकलीफों के भागीदार बनना चाहते हैं। फिर विसंगत परिवेश से और विरासती व परम्परागत सारे अर्थों और संदर्भों के संस्कारगत मोह से। उनके कवि को वर्तमान भारतीय जीवन व्यवस्था तकलीफ देती है, यह सीमाबद्धताओं से आगे, कुछ करना कुछ होना चाहता है। वह भाषा के परम्परागत अर्थों को तोड़ना चाहता है, वह उस सपाट मौन से मुक्ति चाहता है जो उस उसके सामने फैले हुए परिवेश ने दिया है।

संदर्भ –

1 कमलेश शर्मा 'सहमा हुआ समय' पृ0..107
2 कमलेश शर्मा 'सहमा हुआ समय' पृ0...38
3 कमलेश शर्मा 'सहमा हुआ समय' पृ0....37
4 कमलेश शर्मा 'सहमा हुआ समय' पृ0....60
5 कमलेश शर्मा 'सहमा हुआ समय' पृ0....18
6. कमलेश शर्मा 'सहमा हुआ समय' पृ0....46